****

Kabir

**Born** 1440

**Died** 1518

**Poetry:**

## [कबीर दोहावली](https://gauravshri23.wordpress.com/2013/09/08/%e0%a4%95%e0%a4%ac%e0%a5%80%e0%a4%b0-%e0%a4%a6%e0%a5%8b%e0%a4%b9%e0%a4%be%e0%a4%b5%e0%a4%b2%e0%a5%80/)

कबिरा प्याला प्रेम का, अंतर लिया लगाय ।  
रोम रोम में रमि रहा, और अमल क्या खाय ॥

जल में बसै कमोदिनी, चंदा बसै अकास ।  
जो है जाको भावता, सो ताही के पास ॥

प्रीतम के पतियाँ लिखूँ, जो कहुँ होय बिदेस ।  
तन में मन में नैन में, ताको कहा सँदेस ॥

नैनन की करि कोठरी, पुतली पलँग बिछाय ।  
पलकों की चिक डारिकै, पिय को लिया रिझाय ॥

भक्ति भाव भादों नदी, सबै चलीं घहराय ।  
सरिता सोइ सराहिये, जो जेठ मास ठहराय ॥

लागी लागी क्या करै, लागी बुरी बलाय ।  
लागी सोई जानिये, जो वार पार ह्वै जाय ॥

जाको राखे साइयाँ, मारि न सक्कै कोय ।  
बाल न बाँका करि सकै, जो जग बैरी होय ॥

नैनों अंतर आव तूँ, नैन झाँपि तोहिं लेवँ ।  
ना मैं देखी और को, ना तोहि देखन देवँ ॥

सब आए उस एक में, डार पात फल फूल ।  
अब कहो पाछे क्या रहा, गहि पकड़ा जब मूल ।।

लाली मेरे लाल की, जित देखों तित लाल ।  
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल ॥

कस्तूरी कुंडल बसै, मृग ढूँढ़ै बन माहिं ।  
ऐसे घट में पीव है, दुनिया जानै नाहिं ॥

सिर राखे सिर जात है, सिर काटे सिर होय ।  
जैसे बाती दीप की, कटि उजियारा होय ॥

जिन ढूँढ़ा तिन पाइयाँ, गहिरे पानी पैठ ।  
जो बौरा डूबन डरा, रहा किनारे बैठ ॥

बिरहिनि ओदी लाकड़ी, सपचे और धुँधुआय ।  
छुटि पड़ौं या बिरह से, जो सिगरी जरि जाय ॥

जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं ।  
प्रेम गली अति साँकरी, ता मैं दो न समाहिं ॥

इस तन का दीवा करौं, बाती मेलूँ जीव ।  
लोही सींचीं तेल ज्यूँ, कब मुख देखीं पीव ॥

हेरत-हेरत हे सखी, रह्या कबीर हिराइ ।  
बूँद समानी समँद में, सो कत हेरी जाइ ॥

बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड़ खजूर ।  
पंथी को छाया नहीं, फल लागै अति दूर ॥

धीरे-धीरे रे मना, धीरज से सब होय ।  
माली सींचै सौ घड़ा, ऋतु आये फल होय ॥

दुर्बल को न सताइये, जाकी मोटी हाय ।  
बिना जीव की स्वाँस से, लोह भसम ह्वै जाय ॥

ऐसी बानी बोलिये, मन का आपा खोय ।  
औरन को सीतल करै, आपहु सीतल होय ॥

जो तोको काँटा बुवै, ताहि बोउ तू फूल ।  
तोकि फूल को फूल है, वाको है तिरसूल ॥

साईं इतना दीजिए, जामे कुटुंब समाय ।  
मैं भी भूखा ना रहूँ, साधु न भूखा जाय ॥

माटी कहै कुम्हार सों, तू क्या रौंदै मोहिं ।  
इक दिन ऐसा होइगा, मैं रौंदोंगी तोहिं ॥

माली आवत देखिकै, कलियाँ करीं पुकार ।  
फूली-फूली चुनि लईं, कालि हमारी बार ॥

– कबीरदास

## [मुक्ति की आकांक्षा](https://gauravshri23.wordpress.com/2012/09/19/%e0%a4%ae%e0%a5%81%e0%a4%95%e0%a5%8d%e0%a4%a4%e0%a4%bf-%e0%a4%95%e0%a5%80-%e0%a4%86%e0%a4%95%e0%a4%be%e0%a4%82%e0%a4%95%e0%a5%8d%e0%a4%b7%e0%a4%be/)

चिड़िया को लाख समझाओ  
कि पिंजड़े के बाहर  
धरती बहुत बड़ी है, निर्मम है,  
वहॉं हवा में उन्‍हें  
अपने जिस्‍म की गंध तक नहीं मिलेगी।

यूँ तो बाहर समुद्र है, नदी है, झरना है,  
पर पानी के लिए भटकना है,  
यहॉं कटोरी में भरा जल गटकना है।

बाहर दाने का टोटा है,  
यहॉं चुग्‍गा मोटा है।  
बाहर बहेलिए का डर है,  
यहॉं निर्द्वंद्व कंठ-स्‍वर है।

फिर भी चिड़िया  
मुक्ति का गाना गाएगी,  
मारे जाने की आशंका से भरे होने पर भी,  
पिंजरे में जितना अंग निकल सकेगा, निकालेगी,  
हरसूँ ज़ोर लगाएगी  
और पिंजड़ा टूट जाने या खुल जाने पर उड़ जाएगी।  
– सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

## [कबीर दोहावली १](https://gauravshri23.wordpress.com/2012/07/10/%e0%a4%95%e0%a4%ac%e0%a5%80%e0%a4%b0-%e0%a4%a6%e0%a5%8b%e0%a4%b9%e0%a4%be%e0%a4%b5%e0%a4%b2%e0%a5%80-%e0%a5%a7/)

दुख में सुमरिन सब करे, सुख मे करे न कोय ।  
जो सुख मे सुमरिन करे, दुख काहे को होय ॥ 1 ॥

तिनका कबहुँ न निंदिये, जो पाँयन तर होय ।  
कबहुँ उड़ आँखिन परे, पीर घनेरी होय ॥ 2 ॥

माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर ।  
कर का मन का डार दें, मन का मनका फेर ॥ 3 ॥

गुरु गोविन्द दोनों खड़े, काके लागूं पाँय ।  
बलिहारी गुरु आपनो, गोविंद दियो बताय ॥ 4 ॥

बलिहारी गुरु आपनो, घड़ी-घड़ी सौ सौ बार ।  
मानुष से देवत किया करत न लागी बार ॥ 5 ॥

कबिरा माला मनहि की, और संसारी भीख ।  
माला फेरे हरि मिले, गले रहट के देख ॥ 6 ॥

सुख मे सुमिरन ना किया, दु:ख में किया याद ।  
कह कबीर ता दास की, कौन सुने फरियाद ॥ 7 ॥

साईं इतना दीजिये, जा मे कुटुम समाय ।  
मैं भी भूखा न रहूँ, साधु ना भूखा जाय ॥ 8 ॥

लूट सके तो लूट ले, राम नाम की लूट ।  
पाछे फिरे पछताओगे, प्राण जाहिं जब छूट ॥ 9 ॥

जाति न पूछो साधु की, पूछि लीजिए ज्ञान ।  
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान ॥ 10 ॥

जहाँ दया तहाँ धर्म है, जहाँ लोभ तहाँ पाप ।  
जहाँ क्रोध तहाँ पाप है, जहाँ क्षमा तहाँ आप ॥ 11 ॥

धीरे-धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय ।  
माली सींचे सौ घड़ा, ॠतु आए फल होय ॥ 12 ॥

कबीरा ते नर अन्ध है, गुरु को कहते और ।  
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रुठै नहीं ठौर ॥ 13 ॥

पाँच पहर धन्धे गया, तीन पहर गया सोय ।  
एक पहर हरि नाम बिन, मुक्ति कैसे होय ॥ 14 ॥

कबीरा सोया क्या करे, उठि न भजे भगवान ।  
जम जब घर ले जायेंगे, पड़ी रहेगी म्यान ॥ 15 ॥

शीलवन्त सबसे बड़ा, सब रतनन की खान ।  
तीन लोक की सम्पदा, रही शील में आन ॥ 16 ॥

माया मरी न मन मरा, मर-मर गए शरीर ।  
आशा तृष्णा न मरी, कह गए दास कबीर ॥ 17 ॥

माटी कहे कुम्हार से, तु क्या रौंदे मोय ।  
एक दिन ऐसा आएगा, मैं रौंदूंगी तोय ॥ 18 ॥

रात गंवाई सोय के, दिवस गंवाया खाय ।  
हीना जन्म अनमोल था, कोड़ी बदले जाय ॥ 19 ॥

नींद निशानी मौत की, उठ कबीरा जाग ।  
और रसायन छांड़ि के, नाम रसायन लाग ॥ 20 ॥

जो तोकु कांटा बुवे, ताहि बोय तू फूल ।  
तोकू फूल के फूल है, बाकू है त्रिशूल ॥ 21 ॥

दुर्लभ मानुष जन्म है, देह न बारम्बार ।  
तरुवर ज्यों पत्ती झड़े, बहुरि न लागे डार ॥ 22 ॥

आय हैं सो जाएँगे, राजा रंक फकीर ।  
एक सिंहासन चढ़ि चले, एक बँधे जात जंजीर ॥ 23 ॥

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब ।  
पल में प्रलय होएगी, बहुरि करेगा कब ॥ 24 ॥

माँगन मरण समान है, मति माँगो कोई भीख ।  
माँगन से तो मरना भला, यह सतगुरु की सीख ॥ 25 ॥

जहाँ आपा तहाँ आपदां, जहाँ संशय तहाँ रोग ।  
कह कबीर यह क्यों मिटे, चारों धीरज रोग ॥ 26 ॥

माया छाया एक सी, बिरला जाने कोय ।  
भगता के पीछे लगे, सम्मुख भागे सोय ॥ 27 ॥

आया था किस काम को, तु सोया चादर तान ।  
सुरत सम्भाल ए गाफिल, अपना आप पहचान ॥ 28 ॥

क्या भरोसा देह का, बिनस जात छिन मांह ।  
साँस-सांस सुमिरन करो और यतन कुछ नांह ॥ 29 ॥

गारी ही सों ऊपजे, कलह कष्ट और मींच ।  
हारि चले सो साधु है, लागि चले सो नींच ॥ 30 ॥

दुर्बल को न सताइए, जाकि मोटी हाय ।  
बिना जीव की हाय से, लोहा भस्म हो जाय ॥ 31 ॥

दान दिए धन ना घते, नदी ने घटे नीर ।  
अपनी आँखों देख लो, यों क्या कहे कबीर ॥ 32 ॥

दस द्वारे का पिंजरा, तामे पंछी का कौन ।  
रहे को अचरज है, गए अचम्भा कौन ॥ 33 ॥

ऐसी वाणी बोलेए, मन का आपा खोय ।  
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय ॥ 34 ॥

हीरा वहाँ न खोलिये, जहाँ कुंजड़ों की हाट ।  
बांधो चुप की पोटरी, लागहु अपनी बाट ॥ 35 ॥

कुटिल वचन सबसे बुरा, जारि कर तन हार ।  
साधु वचन जल रूप, बरसे अमृत धार ॥ 36 ॥

जग में बैरी कोई नहीं, जो मन शीतल होय ।  
यह आपा तो ड़ाल दे, दया करे सब कोय ॥ 37 ॥

मैं रोऊँ जब जगत को, मोको रोवे न होय ।  
मोको रोबे सोचना, जो शब्द बोय की होय ॥ 38 ॥

सोवा साधु जगाइए, करे नाम का जाप ।  
यह तीनों सोते भले, साकित सिंह और साँप ॥ 39 ॥

अवगुन कहूँ शराब का, आपा अहमक साथ ।  
मानुष से पशुआ करे दाय, गाँठ से खात ॥ 40 ॥

बाजीगर का बांदरा, ऐसा जीव मन के साथ ।  
नाना नाच दिखाय कर, राखे अपने साथ ॥ 41 ॥

अटकी भाल शरीर में तीर रहा है टूट ।  
चुम्बक बिना निकले नहीं कोटि पटन को फ़ूट ॥ 42 ॥

कबीरा जपना काठ की, क्या दिख्लावे मोय ।  
ह्रदय नाम न जपेगा, यह जपनी क्या होय ॥ 43 ॥

पतिवृता मैली, काली कुचल कुरूप ।  
पतिवृता के रूप पर, वारो कोटि सरूप ॥ 44 ॥

बैध मुआ रोगी मुआ, मुआ सकल संसार ।  
एक कबीरा ना मुआ, जेहि के राम अधार ॥ 45 ॥

हर चाले तो मानव, बेहद चले सो साध ।  
हद बेहद दोनों तजे, ताको भता अगाध ॥ 46 ॥

राम रहे बन भीतरे गुरु की पूजा ना आस ।  
रहे कबीर पाखण्ड सब, झूठे सदा निराश ॥ 47 ॥

जाके जिव्या बन्धन नहीं, ह्र्दय में नहीं साँच ।  
वाके संग न लागिये, खाले वटिया काँच ॥ 48 ॥

तीरथ गये ते एक फल, सन्त मिले फल चार ।  
सत्गुरु मिले अनेक फल, कहें कबीर विचार ॥ 49 ॥

सुमरण से मन लाइए, जैसे पानी बिन मीन ।  
प्राण तजे बिन बिछड़े, सन्त कबीर कह दीन ॥ 50 ॥

समझाये समझे नहीं, पर के साथ बिकाय ।  
मैं खींचत हूँ आपके, तू चला जमपुर जाए ॥ 51 ॥

हंसा मोती विण्न्या, कुञ्च्न थार भराय ।  
जो जन मार्ग न जाने, सो तिस कहा कराय ॥ 52 ॥

कहना सो कह दिया, अब कुछ कहा न जाय ।  
एक रहा दूजा गया, दरिया लहर समाय ॥ 53 ॥

वस्तु है ग्राहक नहीं, वस्तु सागर अनमोल ।  
बिना करम का मानव, फिरैं डांवाडोल ॥ 54 ॥

कली खोटा जग आंधरा, शब्द न माने कोय ।  
चाहे कहँ सत आइना, जो जग बैरी होय ॥ 55 ॥

कामी, क्रोधी, लालची, इनसे भक्ति न होय ।  
भक्ति करे कोइ सूरमा, जाति वरन कुल खोय ॥ 56 ॥

जागन में सोवन करे, साधन में लौ लाय ।  
सूरत डोर लागी रहे, तार टूट नाहिं जाय ॥ 57 ॥

साधु ऐसा चहिए ,जैसा सूप सुभाय ।  
सार-सार को गहि रहे, थोथ देइ उड़ाय ॥ 58 ॥

लगी लग्न छूटे नाहिं, जीभ चोंच जरि जाय ।  
मीठा कहा अंगार में, जाहि चकोर चबाय ॥ 59 ॥

भक्ति गेंद चौगान की, भावे कोई ले जाय ।  
कह कबीर कुछ भेद नाहिं, कहां रंक कहां राय ॥ 60 ॥

घट का परदा खोलकर, सन्मुख दे दीदार ।  
बाल सनेही सांइयाँ, आवा अन्त का यार ॥ 61 ॥

अन्तर्यामी एक तुम, आत्मा के आधार ।  
जो तुम छोड़ो हाथ तो, कौन उतारे पार ॥ 62 ॥

मैं अपराधी जन्म का, नख-सिख भरा विकार ।  
तुम दाता दु:ख भंजना, मेरी करो सम्हार ॥ 63 ॥

प्रेम न बड़ी ऊपजै, प्रेम न हाट बिकाय ।  
राजा-प्रजा जोहि रुचें, शीश देई ले जाय ॥ 64 ॥

प्रेम प्याला जो पिये, शीश दक्षिणा देय ।  
लोभी शीश न दे सके, नाम प्रेम का लेय ॥ 65 ॥

सुमिरन में मन लाइए, जैसे नाद कुरंग ।  
कहैं कबीर बिसरे नहीं, प्रान तजे तेहि संग ॥ 66 ॥

सुमरित सुरत जगाय कर, मुख के कछु न बोल ।  
बाहर का पट बन्द कर, अन्दर का पट खोल ॥ 67 ॥

छीर रूप सतनाम है, नीर रूप व्यवहार ।  
हंस रूप कोई साधु है, सत का छाननहार ॥ 68 ॥

ज्यों तिल मांही तेल है, ज्यों चकमक में आग ।  
तेरा सांई तुझमें, बस जाग सके तो जाग ॥ 69 ॥

जा करण जग ढ़ूँढ़िया, सो तो घट ही मांहि ।  
परदा दिया भरम का, ताते सूझे नाहिं ॥ 70 ॥

जबही नाम हिरदे घरा, भया पाप का नाश ।  
मानो चिंगरी आग की, परी पुरानी घास ॥ 71 ॥

नहीं शीतल है चन्द्रमा, हिंम नहीं शीतल होय ।  
कबीरा शीतल सन्त जन, नाम सनेही सोय ॥ 72 ॥

आहार करे मन भावता, इंदी किए स्वाद ।  
नाक तलक पूरन भरे, तो का कहिए प्रसाद ॥ 73 ॥

जब लग नाता जगत का, तब लग भक्ति न होय ।  
नाता तोड़े हरि भजे, भगत कहावें सोय ॥ 74 ॥

जल ज्यों प्यारा माहरी, लोभी प्यारा दाम ।  
माता प्यारा बारका, भगति प्यारा नाम ॥ 75 ॥

दिल का मरहम ना मिला, जो मिला सो गर्जी ।  
कह कबीर आसमान फटा, क्योंकर सीवे दर्जी ॥ 76 ॥

बानी से पह्चानिये, साम चोर की घात ।  
अन्दर की करनी से सब, निकले मुँह कई बात ॥ 77 ॥

जब लगि भगति सकाम है, तब लग निष्फल सेव ।  
कह कबीर वह क्यों मिले, निष्कामी तज देव ॥ 78 ॥

फूटी आँख विवेक की, लखे ना सन्त असन्त ।  
जाके संग दस-बीस हैं, ताको नाम महन्त ॥ 79 ॥

दाया भाव ह्र्दय नहीं, ज्ञान थके बेहद ।  
ते नर नरक ही जायेंगे, सुनि-सुनि साखी शब्द ॥ 80 ॥

दाया कौन पर कीजिये, का पर निर्दय होय ।  
सांई के सब जीव है, कीरी कुंजर दोय ॥ 81 ॥

जब मैं था तब गुरु नहीं, अब गुरु हैं मैं नाय ।  
प्रेम गली अति साँकरी, ता मे दो न समाय ॥ 82 ॥

छिन ही चढ़े छिन ही उतरे, सो तो प्रेम न होय ।  
अघट प्रेम पिंजरे बसे, प्रेम कहावे सोय ॥ 83 ॥

जहाँ काम तहाँ नाम नहिं, जहाँ नाम नहिं वहाँ काम ।  
दोनों कबहूँ नहिं मिले, रवि रजनी इक धाम ॥ 84 ॥

कबीरा धीरज के धरे, हाथी मन भर खाय ।  
टूट एक के कारने, स्वान घरै घर जाय ॥ 85 ॥

ऊँचे पानी न टिके, नीचे ही ठहराय ।  
नीचा हो सो भरिए पिए, ऊँचा प्यासा जाय ॥ 86 ॥

सबते लघुताई भली, लघुता ते सब होय ।  
जौसे दूज का चन्द्रमा, शीश नवे सब कोय ॥ 87 ॥

संत ही में सत बांटई, रोटी में ते टूक ।  
कहे कबीर ता दास को, कबहूँ न आवे चूक ॥ 88 ॥

मार्ग चलते जो गिरा, ताकों नाहि दोष ।  
यह कबिरा बैठा रहे, तो सिर करड़े दोष ॥ 89 ॥

जब ही नाम ह्रदय धरयो, भयो पाप का नाश ।  
मानो चिनगी अग्नि की, परि पुरानी घास ॥ 90 ॥

काया काठी काल घुन, जतन-जतन सो खाय ।  
काया वैध ईश बस, मर्म न काहू पाय ॥ 91 ॥

सुख सागर का शील है, कोई न पावे थाह ।  
शब्द बिना साधु नही, द्रव्य बिना नहीं शाह ॥ 92 ॥

बाहर क्या दिखलाए, अनन्तर जपिए राम ।  
कहा काज संसार से, तुझे धनी से काम ॥ 93 ॥

फल कारण सेवा करे, करे न मन से काम ।  
कहे कबीर सेवक नहीं, चहै चौगुना दाम ॥ 94 ॥

तेरा साँई तुझमें, ज्यों पहुपन में बास ।  
कस्तूरी का हिरन ज्यों, फिर-फिर ढ़ूँढ़त घास ॥ 95 ॥

कथा-कीर्तन कुल विशे, भवसागर की नाव ।  
कहत कबीरा या जगत में नाहि और उपाव ॥ 96 ॥

कबिरा यह तन जात है, सके तो ठौर लगा ।  
कै सेवा कर साधु की, कै गोविंद गुन गा ॥ 97 ॥

तन बोहत मन काग है, लक्ष योजन उड़ जाय ।  
कबहु के धर्म अगम दयी, कबहुं गगन समाय ॥ 98 ॥

जहँ गाहक ता हूँ नहीं, जहाँ मैं गाहक नाँय ।  
मूरख यह भरमत फिरे, पकड़ शब्द की छाँय ॥ 99 ॥

कहता तो बहुत मिला, गहता मिला न कोय ।  
सो कहता वह जान दे, जो नहिं गहता होय ॥ 100 ॥  
-Kabir

## [कबीर दोहावली २](https://gauravshri23.wordpress.com/2012/07/10/%e0%a4%95%e0%a4%ac%e0%a5%80%e0%a4%b0-%e0%a4%a6%e0%a5%8b%e0%a4%b9%e0%a4%be%e0%a4%b5%e0%a4%b2%e0%a5%80-%e0%a5%a8/)

तब लग तारा जगमगे, जब लग उगे न सूर ।  
तब लग जीव जग कर्मवश, ज्यों लग ज्ञान न पूर ॥ 101 ॥

आस पराई राख्त, खाया घर का खेत ।  
औरन को प्त बोधता, मुख में पड़ रेत ॥ 102 ॥

सोना, सज्जन, साधु जन, टूट जुड़ै सौ बार ।  
दुर्जन कुम्भ कुम्हार के, ऐके धका दरार ॥ 103 ॥

सब धरती कारज करूँ, लेखनी सब बनराय ।  
सात समुद्र की मसि करूँ गुरुगुन लिखा न जाय ॥ 104 ॥

बलिहारी वा दूध की, जामे निकसे घीव ।  
घी साखी कबीर की, चार वेद का जीव ॥ 105 ॥

आग जो लागी समुद्र में, धुआँ न प्रकट होय ।  
सो जाने जो जरमुआ, जाकी लाई होय ॥ 106 ॥

साधु गाँठि न बाँधई, उदर समाता लेय ।  
आगे-पीछे हरि खड़े जब भोगे तब देय ॥ 107 ॥

घट का परदा खोलकर, सन्मुख दे दीदार ।  
बाल सने ही सांइया, आवा अन्त का यार ॥ 108 ॥

कबिरा खालिक जागिया, और ना जागे कोय ।  
जाके विषय विष भरा, दास बन्दगी होय ॥ 109 ॥

ऊँचे कुल में जामिया, करनी ऊँच न होय ।  
सौरन कलश सुरा, भरी, साधु निन्दा सोय ॥ 110 ॥

सुमरण की सुब्यों करो ज्यों गागर पनिहार ।  
होले-होले सुरत में, कहैं कबीर विचार ॥ 111 ॥

सब आए इस एक में, डाल-पात फल-फूल ।  
कबिरा पीछा क्या रहा, गह पकड़ी जब मूल ॥ 112 ॥

जो जन भीगे रामरस, विगत कबहूँ ना रूख ।  
अनुभव भाव न दरसते, ना दु:ख ना सुख ॥ 113 ॥

सिंह अकेला बन रहे, पलक-पलक कर दौर ।  
जैसा बन है आपना, तैसा बन है और ॥ 114 ॥

यह माया है चूहड़ी, और चूहड़ा कीजो ।  
बाप-पूत उरभाय के, संग ना काहो केहो ॥ 115 ॥

जहर की जर्मी में है रोपा, अभी खींचे सौ बार ।  
कबिरा खलक न तजे, जामे कौन विचार ॥ 116 ॥

जग मे बैरी कोई नहीं, जो मन शीतल होय ।  
यह आपा तो डाल दे, दया करे सब कोय ॥ 117 ॥

जो जाने जीव न आपना, करहीं जीव का सार ।  
जीवा ऐसा पाहौना, मिले ना दूजी बार ॥ 118 ॥

कबीर जात पुकारया, चढ़ चन्दन की डार ।  
बाट लगाए ना लगे फिर क्या लेत हमार ॥ 119 ॥

लोग भरोसे कौन के, बैठे रहें उरगाय ।  
जीय रही लूटत जम फिरे, मैँढ़ा लुटे कसाय ॥ 120 ॥

एक कहूँ तो है नहीं, दूजा कहूँ तो गार ।  
है जैसा तैसा हो रहे, रहें कबीर विचार ॥ 121 ॥

जो तु चाहे मुक्त को, छोड़े दे सब आस ।  
मुक्त ही जैसा हो रहे, बस कुछ तेरे पास ॥ 122 ॥

साँई आगे साँच है, साँई साँच सुहाय ।  
चाहे बोले केस रख, चाहे घौंट भुण्डाय ॥ 123 ॥

अपने-अपने साख की, सबही लीनी मान ।  
हरि की बातें दुरन्तरा, पूरी ना कहूँ जान ॥ 124 ॥

खेत ना छोड़े सूरमा, जूझे दो दल मोह ।  
आशा जीवन मरण की, मन में राखें नोह ॥ 125 ॥

लीक पुरानी को तजें, कायर कुटिल कपूत ।  
लीख पुरानी पर रहें, शातिर सिंह सपूत ॥ 126 ॥

सन्त पुरुष की आरसी, सन्तों की ही देह ।  
लखा जो चहे अलख को, उन्हीं में लख लेह ॥ 127 ॥

भूखा-भूखा क्या करे, क्या सुनावे लोग ।  
भांडा घड़ निज मुख दिया, सोई पूर्ण जोग ॥ 128 ॥

गर्भ योगेश्वर गुरु बिना, लागा हर का सेव ।  
कहे कबीर बैकुण्ठ से, फेर दिया शुक्देव ॥ 129 ॥

प्रेमभाव एक चाहिए, भेष अनेक बनाय ।  
चाहे घर में वास कर, चाहे बन को जाय ॥ 130 ॥

कांचे भाडें से रहे, ज्यों कुम्हार का देह ।  
भीतर से रक्षा करे, बाहर चोई देह ॥ 131 ॥

साँई ते सब होते है, बन्दे से कुछ नाहिं ।  
राई से पर्वत करे, पर्वत राई माहिं ॥ 132 ॥

केतन दिन ऐसे गए, अन रुचे का नेह ।  
अवसर बोवे उपजे नहीं, जो नहीं बरसे मेह ॥ 133 ॥

एक ते अनन्त अन्त एक हो जाय ।  
एक से परचे भया, एक मोह समाय ॥ 134 ॥

साधु सती और सूरमा, इनकी बात अगाध ।  
आशा छोड़े देह की, तन की अनथक साध ॥ 135 ॥

हरि संगत शीतल भया, मिटी मोह की ताप ।  
निशिवासर सुख निधि, लहा अन्न प्रगटा आप ॥ 136 ॥

आशा का ईंधन करो, मनशा करो बभूत ।  
जोगी फेरी यों फिरो, तब वन आवे सूत ॥ 137 ॥

आग जो लगी समुद्र में, धुआँ ना प्रकट होय ।  
सो जाने जो जरमुआ, जाकी लाई होय ॥ 138 ॥

अटकी भाल शरीर में, तीर रहा है टूट ।  
चुम्बक बिना निकले नहीं, कोटि पठन को फूट ॥ 139 ॥

अपने-अपने साख की, सब ही लीनी भान ।  
हरि की बात दुरन्तरा, पूरी ना कहूँ जान ॥ 140 ॥

आस पराई राखता, खाया घर का खेत ।  
और्न को पथ बोधता, मुख में डारे रेत ॥ 141 ॥

आवत गारी एक है, उलटन होय अनेक ।  
कह कबीर नहिं उलटिये, वही एक की एक ॥ 142 ॥

आहार करे मनभावता, इंद्री की स्वाद ।  
नाक तलक पूरन भरे, तो कहिए कौन प्रसाद ॥ 143 ॥

आए हैं सो जाएँगे, राजा रंक फकीर ।  
एक सिंहासन चढ़ि चले, एक बाँधि जंजीर ॥ 144 ॥

आया था किस काम को, तू सोया चादर तान ।  
सूरत सँभाल ए काफिला, अपना आप पह्चान ॥ 145 ॥

उज्जवल पहरे कापड़ा, पान-सुपरी खाय ।  
एक हरि के नाम बिन, बाँधा यमपुर जाय ॥ 146 ॥

उतते कोई न आवई, पासू पूछूँ धाय ।  
इतने ही सब जात है, भार लदाय लदाय ॥ 147 ॥

अवगुन कहूँ शराब का, आपा अहमक होय ।  
मानुष से पशुआ भया, दाम गाँठ से खोय ॥ 148 ॥

एक कहूँ तो है नहीं, दूजा कहूँ तो गार ।  
है जैसा तैसा रहे, रहे कबीर विचार ॥ 149 ॥

ऐसी वाणी बोलिए, मन का आपा खोए ।  
औरन को शीतल करे, आपौ शीतल होय ॥ 150 ॥

कबीरा संग्ङति साधु की, जौ की भूसी खाय ।  
खीर खाँड़ भोजन मिले, ताकर संग न जाय ॥ 151 ॥

एक ते जान अनन्त, अन्य एक हो आय ।  
एक से परचे भया, एक बाहे समाय ॥ 152 ॥

कबीरा गरब न कीजिए, कबहूँ न हँसिये कोय ।  
अजहूँ नाव समुद्र में, ना जाने का होय ॥ 153 ॥

कबीरा कलह अरु कल्पना, सतसंगति से जाय ।  
दुख बासे भागा फिरै, सुख में रहै समाय ॥ 154 ॥

कबीरा संगति साधु की, जित प्रीत कीजै जाय ।  
दुर्गति दूर वहावति, देवी सुमति बनाय ॥ 155 ॥

कबीरा संगत साधु की, निष्फल कभी न होय ।  
होमी चन्दन बासना, नीम न कहसी कोय ॥ 156 ॥

को छूटौ इहिं जाल परि, कत फुरंग अकुलाय ।  
ज्यों-ज्यों सुरझि भजौ चहै, त्यों-त्यों उरझत जाय ॥ 157 ॥

कबीरा सोया क्या करे, उठि न भजे भगवान ।  
जम जब घर ले जाएँगे, पड़ा रहेगा म्यान ॥ 158 ॥

काह भरोसा देह का, बिनस जात छिन मारहिं ।  
साँस-साँस सुमिरन करो, और यतन कछु नाहिं ॥ 159 ॥

काल करे से आज कर, सबहि सात तुव साथ ।  
काल काल तू क्या करे काल काल के हाथ ॥ 160 ॥

काया काढ़ा काल घुन, जतन-जतन सो खाय ।

काया बह्रा ईश बस, मर्म न काहूँ पाय ॥ 161 ॥

कहा कियो हम आय कर, कहा करेंगे पाय ।

इनके भये न उतके, चाले मूल गवाय ॥ 162 ॥

कुटिल बचन सबसे बुरा, जासे होत न हार ।

साधु वचन जल रूप है, बरसे अम्रत धार ॥ 163 ॥

कहता तो बहूँना मिले, गहना मिला न कोय ।

सो कहता वह जान दे, जो नहीं गहना कोय ॥ 164 ॥

कबीरा मन पँछी भया, भये ते बाहर जाय ।

जो जैसे संगति करै, सो तैसा फल पाय ॥ 165 ॥

कबीरा लोहा एक है, गढ़ने में है फेर ।

ताहि का बखतर बने, ताहि की शमशेर ॥ 166 ॥

कहे कबीर देय तू, जब तक तेरी देह ।

देह खेह हो जाएगी, कौन कहेगा देह ॥ 167 ॥

करता था सो क्यों किया, अब कर क्यों पछिताय ।

बोया पेड़ बबूल का, आम कहाँ से खाय ॥ 168 ॥

कस्तूरी कुन्डल बसे, म्रग ढ़ूंढ़े बन माहिं ।

ऐसे घट-घट राम है, दुनिया देखे नाहिं ॥ 169 ॥

कबीरा सोता क्या करे, जागो जपो मुरार ।

एक दिना है सोवना, लांबे पाँव पसार ॥ 170 ॥

कागा काको घन हरे, कोयल काको देय ।

मीठे शब्द सुनाय के, जग अपनो कर लेय ॥ 171 ॥

कबिरा सोई पीर है, जो जा नैं पर पीर ।

जो पर पीर न जानइ, सो काफिर के पीर ॥ 172 ॥

कबिरा मनहि गयन्द है, आकुंश दै-दै राखि ।

विष की बेली परि रहै, अम्रत को फल चाखि ॥ 173 ॥

कबीर यह जग कुछ नहीं, खिन खारा मीठ ।

काल्ह जो बैठा भण्डपै, आज भसाने दीठ ॥ 174 ॥

कबिरा आप ठगाइए, और न ठगिए कोय ।

आप ठगे सुख होत है, और ठगे दुख होय ॥ 175 ॥

कथा कीर्तन कुल विशे, भव सागर की नाव ।

कहत कबीरा या जगत, नाहीं और उपाय ॥ 176 ॥

कबिरा यह तन जात है, सके तो ठौर लगा ।

कै सेवा कर साधु की, कै गोविंद गुनगा ॥ 177 ॥

कलि खोटा सजग आंधरा, शब्द न माने कोय ।

चाहे कहूँ सत आइना, सो जग बैरी होय ॥ 178 ॥

केतन दिन ऐसे गए, अन रुचे का नेह ।

अवसर बोवे उपजे नहीं, जो नहिं बरसे मेह ॥ 179 ॥

कबीर जात पुकारया, चढ़ चन्दन की डार ।

वाट लगाए ना लगे फिर क्या लेत हमार ॥ 180 ॥

कबीरा खालिक जागिया, और ना जागे कोय ।

जाके विषय विष भरा, दास बन्दगी होय ॥ 181 ॥

गाँठि न थामहिं बाँध ही, नहिं नारी सो नेह ।

कह कबीर वा साधु की, हम चरनन की खेह ॥ 182 ॥

खेत न छोड़े सूरमा, जूझे को दल माँह ।

आशा जीवन मरण की, मन में राखे नाँह ॥ 183 ॥

चन्दन जैसा साधु है, सर्पहि सम संसार ।

वाके अग्ङ लपटा रहे, मन मे नाहिं विकार ॥ 184 ॥

घी के तो दर्शन भले, खाना भला न तेल ।

दाना तो दुश्मन भला, मूरख का क्या मेल ॥ 185 ॥

गारी ही सो ऊपजे, कलह कष्ट और भींच ।

हारि चले सो साधु हैं, लागि चले तो नीच ॥ 186 ॥

चलती चक्की देख के, दिया कबीरा रोय ।

दुइ पट भीतर आइके, साबित बचा न कोय ॥ 187 ॥

जा पल दरसन साधु का, ता पल की बलिहारी ।

राम नाम रसना बसे, लीजै जनम सुधारि ॥ 188 ॥

जब लग भक्ति से काम है, तब लग निष्फल सेव ।

कह कबीर वह क्यों मिले, नि:कामा निज देव ॥ 189 ॥

जो तोकूं काँटा बुवै, ताहि बोय तू फूल ।

तोकू फूल के फूल है, बाँकू है तिरशूल ॥ 190 ॥

जा घट प्रेम न संचरे, सो घट जान समान ।

जैसे खाल लुहार की, साँस लेतु बिन प्रान ॥ 191 ॥

ज्यों नैनन में पूतली, त्यों मालिक घर माहिं ।

मूर्ख लोग न जानिए, बहर ढ़ूंढ़त जांहि ॥ 192 ॥

जाके मुख माथा नहीं, नाहीं रूप कुरूप ।

पुछुप बास तें पामरा, ऐसा तत्व अनूप ॥ 193 ॥

जहाँ आप तहाँ आपदा, जहाँ संशय तहाँ रोग ।

कह कबीर यह क्यों मिटैं, चारों बाधक रोग ॥ 194 ॥

जाति न पूछो साधु की, पूछि लीजिए ज्ञान ।

मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान ॥ 195 ॥

जल की जमी में है रोपा, अभी सींचें सौ बार ।

कबिरा खलक न तजे, जामे कौन वोचार ॥ 196 ॥

जहाँ ग्राहक तँह मैं नहीं, जँह मैं गाहक नाय ।

बिको न यक भरमत फिरे, पकड़ी शब्द की छाँय ॥ 197 ॥

झूठे सुख को सुख कहै, मानता है मन मोद ।

जगत चबेना काल का, कुछ मुख में कुछ गोद ॥ 198 ॥

जो तु चाहे मुक्ति को, छोड़ दे सबकी आस ।

मुक्त ही जैसा हो रहे, सब कुछ तेरे पास ॥ 199 ॥

जो जाने जीव आपना, करहीं जीव का सार ।

जीवा ऐसा पाहौना, मिले न दीजी बार ॥ 200 ॥

-Kabir